NOVATEUR PUBLICATIONS
JournalNX- A Multidisciplinary Peer Reviewed Journal
ISSN No: 2581 - 4230
VOLUME 6, ISSUE 10, Oct. -2020

'मैला आँचल'— एक विवेचन

अंशु कुमारी
अतिथि व्याख्याता,
हिन्दी विभाग
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा।

साहित्य सृजन के माध्यम से तमाम साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं द्वारा हिन्दी साहित्य जगत् को अमूल्य निधियों से भरा है और इन्हीं समस्त साहित्यिक निधियों के बीच कुछ ऐसी रचनाएँ विद्यमान है जो साहित्यकार को अमर बना देती है जैसे प्रेमचंद कृत 'गोदान', जयषंकर प्रसाद की 'कामायनी', पंत कृत 'पल्लव' इत्यादि। 'मैला आँचल' फणीष्वरनाथ 'रेणु' जी की इन्ही रचनाओं की भाँति अमर कृति है। तभी तो उपन्यास जगत में 'गोदान' के पश्चात 'मैला आँचल' को ही सर्वश्रेष्ठ रचना की श्रेणी में शामिल किया जाता है।

1954 में प्रकाशित 'मैला आँचल' अपनी रचनाकाल से आज तक न केवल साहित्यिक जगत में अपितु अपने पाठक वर्ग के ह्रदय में आँचलिकता की महक को यथावत बनाये हुए है। हालांकि रेणु जी से पूर्व आचार्य शिवपूजन सहाय ने 1926 में अपनी रचना 'देहाती दुनिया', तथा नागार्जुन ने 1952 में 'बलचनमा' के माध्यम से आँचलिक उपन्यास के क्षेत्र में कदम जरूर रखा था किन्तु इस प्रयोग में सफलता 'मैला आँचल' को ही मिली। जिसने फणीष्वरनाथ रेणु जी की 'मैला आँचल' को आँचलिकता का पर्याय बना दिया। दरअसल 'आँचलिकता' शब्द का तात्पर्य किसी रचना में एक क्षेत्र विशेष के शब्दों और परम्पराओं का बहुतायत में पाए जाने से है। मूल रूप से समझा जाए तो उस रचना का कथानक कोई व्यक्ति विषेष नहीं बल्कि एक क्षेत्र विषेष होता है और उस क्षेत्र में रहने वालों की सामाजिक, मानसिक, सांस्कृतिक आदि दषाओं के माध्यम से रचनाकार अपनी रचना को सार्थकता प्रदान करता है। ठीक ऐसा ही हमें उपन्यास 'मैला आँचल' में देखने को मिलता है जिसका कथानक है— नेपाल की सीमा से सटा उत्तर—पूर्वी बिहार का एक छोटा—सा गाँव 'मेरीगंज'। तभी तो स्वयं फणीष्वरनाथ रेणु अपने इस उपन्यास के विषय में लिखते है—''यह है

'मैला आँचल', एक आंचलिक उपन्यास।' कहा जाता है कि एक महान रचनाकार अपने द्वारा रचित हर पात्र के भीतर पैठ जाने की क्षमता रखता है और इसी समावेषी शक्ति के धनी फणीष्वरनाथ रेणु 'मैला आँचल' के हर पात्र को सजीव बना देते है तभी तो साहित्यिक शब्दों एवं भाषाओं से अपनी लेखनी को सुसज्जित करने वाला साहित्यकार ग्रामीण परिवेष की नब्ज में समा कर ग्रामीण बोली, परिवेष, रीतियाँ–कुरीतियाँ, परम्परा, आडम्बर इत्यादि सभी की सफल अभिव्यक्ति करता दिखता है। और इसी कारण पूरे उपन्यास की कथा यात्रा के दौरान ग्रामीण शब्दों की प्रचुरता मिलती है जैसे– पुरैनिया (पुर्णिया), टीसन (स्टेषन), गनही (गाँधी), सुराज (स्वराज) इत्यादि इत्यादि। ऐसे शब्द जहाँ कुछ पाठकों के लिए दुरूह बन सकते हैं पर ये शब्द आँचलिक उपन्यासों के प्राण तत्व साबित होते है। इसीलिए ये शब्द इस उपन्यास की कमजोरी नहीं अपितु इसकी शब्द शक्ति है और जब आँचलिकता इस उपन्यास की विशेषता ही है तो ऐसे अनेक शब्दों के भंडार इसमें प्रयुक्त मिलेंगे। इसी प्रकार क्योंकि हर क्षेत्र विषेष की अपनी कुछ मान्यताएँ एवं परम्पराएँ होती है। वैसी ही इस उपन्यास के संदर्भ में भी देखने को मिलती है जैसे–कमला नदी से जुड़ी मान्यताएँ, जाती–पाती का ढकोसलापन, सामाजिक भोज के अवसर पर बड़ी जातियों का छोटी जातियों के साथ न खाना आदि।

इस उपन्यास में घटित अनेक घटनाएँ है जो यह अहसास कराती है कि मानसिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े इस ग्रामीण परिवेष में भी सामाजिक बुराईयाँ एवं कुरीतियाँ बिमारी की भाँती ही इस गाँव में अपने पैर पसारे हुए है। मंदिर एवं मठों के पुजारियों के भेस में छिपे महंत जी द्वारा राधा नामक युवती का शोषण ऐसी ही बुराईयों का प्रमाण है जो इस उपन्यास में स्पष्ट किया गया है। गाँव में विद्यमान विभत्य चेहरे को भी दिखाया है जो पूरे उपन्यास में हमे यदा–कदा देखने को मिल ही जाते है जैसे डॉ0 प्रषान्त के गाँव आने पर लोगों में उनकी जाति जानने की आतुरता, सभी जातियों के रहने के अलग–अलग स्थान भी इस गाँव में जातिवाद के दुराचार की ओर संकेत करते है। इसी कारण उपन्यास में जाति को लेकर राजनीति भी दिखाई देती है। उसको लेकर सभी अलग–अलग गुटों में बॅटे हुए थे। कांग्रेसी तथा सोषलिस्ट पार्टियों की गतिविधियाँ, विचारधाराए एवं कार्य करने के तरीके को भी दिखाया गया है। साथ–ही इस उपन्यास में यह

भी दर्षाने का प्रयास किया गया है कि अधुनिकता का रंग किस प्रकार क्षेत्र व अंचलों पर भी कमोवेष रूप में अपना असर छोड़ रहे थे। जहाँ आधुनिकवादी संक्रमण के इस दौर में भी डायन कह कर एक औरत की हत्या कर दी जाती है, दवाओं का निर्माण गाय के खून से होने की अफवाहों का सच माना जाना जैसी हरकते इस बात को स्पष्ट करती है कि गाँव में आधुनिकता के इस दौर में भी अषिक्षा और अंधविष्वास का ही वास था। जिस कारण वहाँ आज भी ब्राह्मणवादी और सामंती व्यवस्था विद्यमान थी। जिसका गलत लाभ समकालिन जमींदार, तहसीलदार, ध्रुत ब्राह्मण आदि उठाते थे। इस प्रकार रेणु जी ने ग्रामीणों के दयनीय एवं शोषित दषा का चित्रण अपने इस उपन्यास के पात्रों के माध्यम से कर दिया है। तो साथ ही फणीष्वर नाथ रेणु ने कुछ किसानों में उत्पन्न हो रहे अधिकार चेतना और संघर्षषील व्यवहार का भी वर्णन किया है। कालीचरण जैसा पात्रा इस नवीन चेतना का उदाहरण है। स्वतंत्रता संग्राम एवं सत्याग्रह के प्रभाव से ग्रामीण परिवेष भी अछूता न रहा जिसका प्रतीक है उपन्यास में बावनदास, बालदेव आदि जैसा पात्र जो सुराज(स्वराज्य) के खातिर जेल जाते है तथा अनेक प्रकार की तकलीफों का सामना भी करते है। यहॉ के ग्रामीणों के विषय में हम डॉ0 प्रषांत (जो इस उपन्यास का अहम एवं शिक्षित पात्र है) के द्वारा इस गाँव के लोगों के विषय में कही गई इस बात से जान सकते है जिसके अनुसार ‘‘गाँव के लोग बड़े सीधे दिखते है, सीधे का अर्थ यदि अनपढ़, अज्ञानी और अंधविष्वास हो तो वास्तव में सीधे है। जहाँ तक सांसारिक बुद्धि का सवाल है वे हमारे और तुम्हारे जैसे लोगों को दिन मे पाँच बार ठग लेगे और तारीफ यह कि तुम ठगी जाकर भी उनकी सरलता पर मुग्ध होने के लिए मजबूर हो जाओगे।’’ इस कथन में समस्त ग्रामवासियों के स्वाभाव का अंतर्विरोध स्पष्ट व्यक्त होता है। जहाँ तक डॉ0 प्रषान्त के निजी अनुभव की बात की जाए तो वह गाँव वालों के व्यवहार से आष्चर्यचकित है। उसके व्यक्तित्व की बात करे तो रेणु जी ने इस पूरे उपन्यास में सबसे उज्जवल एवं प्रगतिषील चरित्रा के रूप में डॉ0 प्रषान्त को ही रखा है जो ग्रामीण अंधकारों को अपने चारित्रिक प्रकाष से दूर करने हेतु प्रयासरत रहता है। न तो वह रूढ़ियों को मानता है और अपने सम्पर्क में आए हर किसी को ऐसा ही करने की प्रेरणा देता है। वही विष्वनाथ मलिक जो गाँव का तहसीलदार तथा फिर कांग्रेस के नेता के रूप नजर आता है वह पूर्णतः एक शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। अपने दमनकारी जमीदारी के चक्र में वह कई

मासूमों को पीसता है और सामाजिक तौर पर एक शराफत का मुखौटा धारण किए हुए रहता है। सिर्फ यही नही बल्कि अज्ञानता एवं जागरूकता के अभाव में इस गाँव में मलेरिया, कालाजार, पायरिया आदि से ग्रसित है और दीनता के कारण इन बिमारियों से लड़ने की असमर्थता है जिससे कई लोग पीड़ित है। और इससे होने वाली मौतों को कभी डायन का नाम दिया जाता है तो कभी कुछ और। भूत—प्रेतों की साया की छाया भी मानने वाले इस गाँव के पात्रों में शामिल है। इस प्रकार मिथकों और रूढ़ियों से घिरा यह गाँव अनेक समस्याओं से जुझता नजर आती है। जहाँ पीड़ित भी है और पीड़ित करने वाले भी है। और इन्ही द्वंद्वो से जुझते दिखते है। और नए पात्रों के साथ नई प्रवृतियों का भी उद्घाटन होता चला जाता है।

पात्रों की बात की जाए तो उपन्यास में कई पात्रों की भूमिका है। जिनमें से कुछ पात्र अपनी हरकतों से गुदगुदाते है, कुछ उच्च जातियों को प्रदर्शित करते पात्र हमें इतिहास की पुस्तकों में वर्णित जालिम जमीदारों की याद दिलाते है तो वही इस उपन्यास के केन्द्र पात्र पढ़ा—लिखा डाक्टर प्रषांत नैतिकता का परिचायक नजर आता है जो इन ग्रामीणों की वर्त्तमान स्थिति में सुधार हेतु प्रयासरत्त है, साथ—ही क्योंकि इस उपन्यास की कथावस्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के दो—एक वर्ष पहले से लेकर उसके लगभग एक वर्ष बाद तक की है इसीलिए इस उपन्यास में हमें राजनीति का कुचक्र भी देखने को मिलता है। सभी पात्रों में हमें मोटे तौर पर अलग—अलग वाद दृष्टिगोचर होते है जैसे— जातिवाद, समाजवाद, पूँजीवाद, विकासवाद आदि। अतः डॉ0 प्रषांत, कमला, विष्वनाथ, कालीचरन आदि पात्रों से मिश्रित यह उपन्यास जहॉ एक ओर प्रचलित जातिवाद के वीभत्स चेहरे को दिखाता हे जिससे निराषा उत्पन्न होती है तो वहीं जमीदारों के क्रूर व्यवहार पाठकों में क्रोध का भाव उत्पन्न करती है, मठ्ठ के मालिकों का नीचपन जहाँ धृणा उत्पन्न करती है तो साथ—ही डॉ0 प्रषान्त एवं कमला का सात्विक प्रेम हृदय में एक मधुरता उत्पन्न करती है।

इस प्रकार यह उपन्यास कई भावों एवं रस को प्रस्फूटित करती है किन्तु कहीं भी कोई घटना अस्वाभाविक या नकली नहीं लगती है जो इसे सर्वग्राह्य बनाती है। साथ—ही प्रदर्षित करती है रेणु जी के परकाया प्रवेष की असीम क्षमता को। साथ ही क्योंकि यह उपन्यास विषेष नायक प्रधान नहीं है, अपितु पूर्ण अंचल ही इसके प्रधान नायक के रूप में

वर्णित हुआ है। अतः उस अंचल में पनप रहे एवं पनप चुके मनोवृत्तियों पर प्रकाष डालना निष्चित रूप से अनिवार्य हो जाता है, जिसमें जैसा कि उपर बताया गया है महन्तो के चारित्रिक पतन की भी चर्चा है जो अपनी कुत्सित मानसिकता से ग्रसित होने के कारण मठ को अंदर से वेष्यालय बना दिया है जहाँ मठो की सेविकाओं के मान सम्मान एवं इज्जत का मर्दन किया जाता है। जहॉ पर दूसरों का उद्वार करने वाले गुरू एव ंचेला दोनों ही एक से बढ़कर एक भ्रष्ट एवं चरित्रहीन है। किसी ग्रामीण परिवेष में घटित ऐसे घृणित क्रिया का उद्घाटन करना निःसंदेह ही एक साहसी प्रयास है और रेणु जी ने निर्थिकता से इस पक्ष का वर्णन इसीलिए भी किया है क्योंकि उनका मानना है कि 'घृणित—अष्लील पषुता पर मंगल कामना का जयघोष अवष्य गूँजगा।'

इस उपन्यास में चेतना और रूढ़िवाद का विरोधाभास देखने को मिलता है। जिसमें निःसंदेह प्रासंगिकता भी है क्योंकि आज के परिवेष में भी हम जातिवाद की भीषणता, बलात्कार, शोषण जैसे जघन्य कृत्यों का अस्तित्व भी पाते है, जमींदारी समाज का ऐसा प्रभाव आज भी विद्यमान है जहाँ अमीर और अमीर और गरीब और भी निर्धन ही होते जाते है। एक दमनकारी शक्ति है जो इस खाई को पाटने ने नहीं देती है। इस अंतर को कभी मिटने नहीं देना चाहती है। मूल रूप से कहा जाए तो उपन्यास 'मैला आँचल' में जिस गरीबी, गुलामी, शोषण, नस्लवाद, जातिवाद, दमन आदि की बात कही गयी है। वह समस्यसा आज के भारत की भी हे। यह मूल भारत की बात है जहाँ शक्तियाँ कुछ हाथों में कैद है और शेष का अस्तित्व यूँ ही खतरे में है। जहाँ आज भी बहुसंख्यक ग्रामीणों को आर्थिक विपन्नता एवं पिछड़ेपन से जूझना पड़ता है। ग्रामीण परिवेष के इर्द—गिर्द घुमी इस उपन्यास की कथावस्तु उस अंचल विषेष के लगभग हर पहलू को छुती हुई गुजरती है जिसका वर्णन इसमें किया गया है और इस क्र में उपन्यासकार बिल्कुल निष्पक्ष होकर अपनी भूमिका निभाता दिखता है। चाहे वह यहाँ की प्रकृति को वर्णित कर रहा हो या फिर यहाँ के लोगों की प्रकृति की कहीं भी वह अपने इस वर्णन क्रम में किसी का पक्षधर नहीं जान पड़ता। लोगों का भोलापन हो या उनकी चतुरता दोनों ही वर्णन के लिए रेण जी ने उनके संवाद का सहारा लिया है जिसमें कि उनके पात्रों का चित्रण खुद—ब—खुद पाठकों के समक्ष कुषलतापूर्वक हो

जाए। और इस संवाद का उन्होंने माध्यम भी अपने पात्रों के अनुसार भिन्न–भिन्न बोलियों को बनाया है। जैसे डॉ0 प्रषान्त की भाषा शैली ही उसके योग्यता का परिचय दे देती है तो वहीं कुछ ग्रामीणों के संवाद हमें उनकी स्थिति से अवगत करा देती है। इस कारण यह कहीं नहीं लगता कि उपन्यासकार स्वयं की तरफ से कुछ प्रदर्शित करने का प्रयत्न कर रहें हो अपितु सब कुछ अत्यंत स्वाभाविक प्रभाव से बढ़ता जाता है। इसी कारण 'मैंला आँचल' को न केवल आंचलिकता के क्षेत्रा में अपितु समस्त साहित्य जगत का श्रेष्ठ और सषक्त रचना माना गया है।

इस प्रकार इस उपन्यास में हमें समाज के धूप–छाँह, फूल और काँटो का मेल मिलता है इसी कारण रेणु जी कहते है कि–''कथा की अच्छाईयाँ हो या बुराईयाँ में किसी से अपना दामन बचाकर नहीं निकल पाया।'' किन्तु इन्ही विरोधों के सामन्जस्य से बना यह उपन्यास प्रतिकूलता में अनुकूलता की ओर इषारा करता है जो इस उपन्यास को अद्वितीय एवं आँचलिक उपन्यासों में सिरमौर का स्थान दिलाती है।

संदर्भ सूचीः–

1. फणीष्वरनाथ रेणु– मैला आँचल, भूमिका
2. फणीष्वरनाथ रेणु– मैला आँचल, पृष्ट सं0–6, 7, 56
3. भारत याथावरः 'रेण का है अंदाजे बयां और, राजकमल प्रकाषन, पृष्ठ सं0–127
4. अंतर्जाल पर उपलब्ध यदुनन्दन प्रसाद उपाध्याय का लेख 'मैला आँचल' का यथार्थ लिंक– http://www.rachanakar.org/2016/02/blog-post-57. html?m=1
5. अंतर्जाल पर उपलब्ध लेख–पुस्तक समीक्षाः फणीष्वरनाथ 'रेणु' द्वारा रचित 'मैला आँचल' लिंक–
   - http://www.yayawar.in/2015/09/bookreview-maila-anchal-by-phanishwar-nath-renu. html?m=1